B.A. Part one
Paper- IInd

By :-
Dr. Shailesh Kumar
dept. of economics
Raja Singh College
Siwan.

मजदूरी एवं प्रतियोगिता बाजार में मजदूरी निर्धारण :-
(Wages and determination of wages in competitive market.)

साधारण बोल चाल की भाषा में हम कह सकते हैं कि दफ्तर का अधिकारी, मंत्री या अध्यापक वेतन प्राप्त करता है, वकील या डॉक्टर फीस लेता है और दक्ष तथा अदक्ष श्रमिक को मजदूरी मिलती है, फिर भी अर्थशास्त्र में ऐसा कोई भेद नहीं किया जाता और यह कहा जाता है कि वे सब मजदूरी प्राप्त करते हैं। दूसरे शब्दों में फीस, कमीशन और वेतन मजदूरी में शामिल हैं। यह और बात है कि कुछ को मजदूरी वास्तविक रूप में अधिक और मुद्रा के रूप में कम और विशेषतः मिले।

मजदूरी साप्ताहिक, पाक्षिक तथा मासिक दी जा सकती है, जबकि किसी काम के निश्चित अवधि के भीतर या उससे पहले ही पूरा हो जाने पर उसका भुगतान किया जाता है। काम की मात्रा के अनुसार भी मजदूरी दी जा सकती है। कभी-कभी अल्प वैतनिक कर्मचारियों के हित में राज्य की ओर से कुछ या सभी उद्योगों में मजदूरी नियमित की जाती है, क्यों कि वह न्यूनतम मजदूरी होती है। जिससे जीवन का एक न्यूनतम स्तर सुनिश्चित होता है।

इस संबंध में अर्थशास्त्रियों ने समय-समय पर कई सिद्धान्त, मजदूरी कोष तथा अवशेषग्राही सिद्धान्त लोकप्रिय

P.T.O.

सीमान्त उत्पादकता सिद्धांत रहे। इसके बाद 1930 तक मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता सिद्धांत अधिक प्रचलित रहा। 1930 के बाद अर्थशास्त्रियों ने मार्शल के इस सिद्धान्त में अधिक दिलचस्पी ली कि "मजदूरी मांग एवं अथवा पूर्ति कीमत से शासित नहीं होती बल्कि वह तो मांग और पूर्ति को शासित करने वाले कारण के पूरे समुदाय से शासित होती है।" किसी भी अन्य सेवा की भांति, पूर्ण प्रतियोगिता के अन्तर्गत मजदूरी भी श्रम की मांग और पूर्ति के द्वारा निर्धारित होती है।

प्रतियोगिता बाजार में मजदूरी का निर्धारण :-

किसी भी कीमत की भांति मजदूरी की दर भी, श्रम के लिए मांग और उसकी पूर्ति के द्वारा निर्धारित होती है।

यह सिद्धान्त निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है:—

(1) व्यवसाय की पूर्ण स्वतंत्रता है कोई भी नियोजक किसी को भी नियुक्त कर सकता है और कोई भी वर्कर किसी भी मालिक के पास काम कर सकता है।

(2) श्रम बाजार में अनेक नियोजक और अनेक वर्कर हैं और कोई भी अकेला मजदूरी को प्रभावित नहीं कर सकता है।

(3) वर्करों की विभिन्न रोजगारों में पूर्ण गतिशीलता पाई जाती है।

(4) अर्थ व्यवस्था में पूर्ण रोजगार पाया जाता है रिक्त स्थान उपलब्ध नहीं जाते हैं।

(5) वर्करों और नियोजकों को बाजार का पूर्ण ज्ञान है। वर्करों को यह मालूम है कि रिक्त स्थान कहाँ है, मजदूरी दरें क्या हैं। इसी प्रकार नियोजकों को वर्करों का पूर्ण ज्ञान है कि वे किस मजदूरी दर पर और कहाँ उपलब्ध हैं।

Scanned by CamScanner

श्रम की माँग (demand of labour)

नियोजक (employers) श्रम की माँग इसलिए करते हैं ताकि श्रम की सेवाओं से वस्तुओं के उत्पादन में सहायता मिले। इस प्रकार श्रम जिन वस्तुओं के उत्पादन में सहायता देता है; उन वस्तुओं की माँग के द्वारा श्रम की माँग निर्धारित होती है। यदि एक वस्तु की माँग में उतार या चढ़ाव की आशा हो, तो उस वस्तु का उत्पादन करने वाले श्रम की माँग में भी उतार या चढ़ाव आ जायेगा। इसलिए श्रम की माँग उस वस्तु से व्युत्पन्न (derive) होती है। जिसका वह उत्पादन करता है।

श्रम की पूर्ति (Supply of labour) श्रम की पूर्ति का अर्थ है श्रमिकों की वह संख्या जो मजदूरी की प्रत्येक संभव दर पर रोजगार के लिए अपने को प्रस्तुत करेगी। मजदूरी और श्रम की मात्रा के बीच सीधा संबंध होता है। सामान्य तथ से मजदूरी के ऊँचे स्तरों पे श्रम की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा प्रस्तुत होती है। यही कारण है कि पूर्ति का माँग वक्र का सामना करना पड़ता है। वह ऊँची मजदूरी देकर ही अधिक श्रम आकर्षित कर सकता है।

पिछे की ओर ढालू श्रम का पूर्ति वक्र (backward sloping supply curve of labour) प्रत्येक वर्कर के जीवन में एक समय ऐसा आता है जब वह यह अनुभव करता है कि उसकी जरूरतें आसानी से पूरी हो जाती हैं। यदि समय मजदूरी की दर पर उस स्तर पर वह जाती है तो वह कम घंटे काम और अधिक आवकाश को अधिमान देगी। ऐसी स्थिति में श्रम का पूर्ति वक्र पिछे की ओर ढालू होगा।

Scanned by CamScanner